हो उठेगा जो सम्पूर्ण तप, यज्ञ, दान मनोधर्मादि से दिव्य है। गीता का श्रवण भक्त के मुखारविन्द से ही करना योग्य है, क्योंकि चौथे अध्याय के आरम्भ में कहा है कि एकमात्र भक्तजन गीता के रहस्य को पूर्णरूप से जान सकते हैं। मनोधर्मियों के स्थान पर भक्तों के मुखारविन्द से गीता का श्रवण करने का ही नाम श्रद्धाभाव है। वस्तुतः भक्तों के प्रसंग से ही भक्तियोग में प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार की सेवा से श्रीकृष्ण के लीलाविलास, रूप, कार्य-कलाप, नाम आदि हृदय में स्फुरित हो उठते हैं और सम्पूर्ण अनर्थों की निवृत्ति हो जाती है। इस प्रकार सब संशय-भ्रम के दूर हो जाने पर गीता का स्वाध्याय अतिशय आनन्दवर्धन लगने लगता है और कृष्णभावनामृत के प्रति रसज्ञता एवं भाव का उदय होता है। आगे चलकर श्रीकृष्ण में पूर्ण अनुराग हो जाता है। यह जीवन की उस परमसिद्ध अवस्था का आरम्भ है, जिससे भक्त परव्योम में श्रीकृष्ण के गोलोक-वृन्दावन धाम में प्रविष्ट होकर सच्चिदानन्दमय जीवन में मग्न होने के योग्य हो जाता है।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्मयोगो नामाष्टमोऽध्यायः।।८।।

इति भक्तिवेदान्त भाष्ये अष्टमोऽध्यायः।।